International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 05, No. 02(I), April - June, 2023, pp. 107-112

कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र में प्रशासनिक व्यवस्था

डॉ. विजयश्री*
एकता सागर**

सार

कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र में विजिगीषु राजा के अधीनस्थ संपूर्ण राज्य के केन्द्रीकृत प्रशासन तंत्र का विस्तृत वर्णन और विश्लेषण किया गया है। प्रशासन में कौटिल्य ने राजा, मंत्रिपरिषद, मंत्रीगण, अमात्यों जैसे उच्च लोकसेवकों के अतिरिक्त मध्यस्तरीय अधिकारी वर्ग जैसे अध्यक्षों राजकर्मचारियों का उल्लेख किया है। साथ ही उनके विभागीय उत्तरदायित्व का भी वर्णन किया है। राजा शासन का प्रधान था अतः शासन संचालन वह स्वयं, मंत्रिपरिषद विभागीय अध्यक्षों, तथा अन्य अधीनस्थ कर्मचारियों की सहायता से करता था। इस प्रकार सभी कर्मचारी अपने – अपने कार्यों के लिए राजा के प्रति उत्तरदायी थे। प्रस्तुत शोधपत्र में कौटिल्य के प्रशासनिक विचारों का विश्लेषण किया गया है।

शब्दकोशः *कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र, केन्द्रीकृत प्रशासन, प्रशासनिक विचार, उत्तरदायित्व, वैदिक साहित्य।*

प्रस्तावना

वैदिक साहित्य में हमें दो प्रकार की राजतंत्रात्मक शासन पद्धतियों के दर्शन होते हैं– नियंत्रित और अनियंत्रित। इन पद्धतियों के स्वामी (राजा) का यह दावा रहा है कि उसकी उत्पति दैविय है जो या तो बिना किसी प्रकार के विरोध के देश पर अधिकार कर लेता था अथवा विरोध को दबाकर सारे शासन को स्वायत्त कर लेता था। नियन्त्रण की दशा में तो वह जनता की रजामंदी से ही जनता पर अधिकार करता था और दूसरी अनियंत्रित दशा में अपने बल द्वारा उस पर काबू रखता था। ये दोनों प्रकार की पद्धतियां वंशगत थी। अनियत्रित राज्य बलपूर्वक भी प्राप्त किया जा सकता है ऐसा विधान हमें अथर्ववेद में भी देखने को मिलता है। साथ ही वैदिक ग्रन्थों में हमें यह भी देखने को मिलता हैं कि नियन्त्रित राज्यतंत्र में राजा या तो चुना जाता हैं या स्वीकार किया जाता था। जनहित को प्राथमिकता दी जाती थी। यहीं व्यवस्था हमें कौटिल्य के प्रशासन सम्बन्धी विचारों में भी देखने को मिलती है।[1]

कौटिल्य एक कुशल प्रशासनिक चिंतक थे। राजतंत्र के समर्थक होते हुए भी प्रत्येक स्तर पर वे जनहित के पक्षधर थे। उन्होंने राजा को महाप्रशासक के रूप में देखा। उन्होंने केन्द्रीय प्रशासनिक मशीनरी में 'राजा' को उसके विश्वसनीय परामर्शदाताओं और विभागीय प्रमुखों को शामिल किया है। उन्होंने राजकीय कार्यो के संचालन और निर्णयों के कार्यान्वयन के लिये विभिन्न अधिकारियों की नियुक्ति करने की व्यवस्था की। उन्होंने

---

* सह आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान।
** शोद्यार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान।

शासन के प्रमुख विभागों को अठारह भागों में विभाजित किया जिसे ''अष्टादशतीर्थ'' कहा गया। प्रत्येक विभाग का एक प्रधान अधिकारी होता था। कई विभागों के अन्तर्गत कई उपभाग भी थे जो संबंधित प्रधान विभाग की देखरेख में कार्य करते थे।[2] कौटिल्य ने मुख्य रूप से जिन अधिकारियों की गणना की वे इस प्रकार हैं–मंत्री (विभाग का सर्वोच्च पदाधिकारी), पुरोहित (राजगुरू और धार्मिक कार्यो का अधिष्ठाता), सेनापति (सेना पर नियत्रंण करने वाला), युवराज (राजप्रशासन का प्रधान अधिकारी, भावी राजा), दौवारिक (राजमहल का संरक्षक), अन्तर्वेशिक (प्रधान अंगरक्षक), प्रशास्ता (कारागारों का प्रधान अधिकारी), समाहर्ता (राजकोष का रक्षक, अभियोगो का निर्णायक), सन्निधाता (राजकीय निर्माणों का अधीक्षक एवं आय का ज्ञान रखने वाला), प्रदेष्टा (फौजदारी मुकदमों का निर्णायक), नायक (सेना में मुख्य अधिकारी), व्यावहारिक (धर्मस्थलीय न्यायालय का अधिकारी), कार्मान्तिक (खानों तथा कारखानों का अधिकारी), महामात्य (अमात्य–परिषद् का अध्यक्ष), दण्डपाल (सेना विभाग का एक अधिकारी), दुर्गपाल (दुर्ग का अधीक्षक), अन्तपाल (सीमांत प्रदेशों का प्रधान अधिकारी), आटविक (वनों और वन्य जातियों का प्रबंधक)

अध्यक्षों की नियुक्ति एवं योग्यता

उनके मतानुसार अष्टादश तीर्थो और उनके अधीनस्थ कर्मचारियों के लिये यह आवश्यक था कि वे आत्मोचित गुण से सम्पन्न हो, पुरोहित उच्च कुलीन, शीलगुण सम्पन्न, वेद और व्याकरणादि का ज्ञाता, ज्योतिष, दण्डनीति में पारगंत, विनीत तथा मानवीय विपत्तियों का प्रतिकार करने में समर्थ हो। सेनापति और युवराज के अतिरिक्त अन्य सभी अध्यक्षों के लिये आत्मोचित गुणों के साथ–साथ परीक्षा में सफल होना आवश्यक था। युवराज बोलने में कुशल, बलवान, उत्साही, संयमी, समस्त कलाओं में निपुण, विपति ग्रस्त शत्रु पर आक्रमण करने में उधत, लज्जाशील, दूरदर्शी, देशकाल के अनुसार पुरूषार्थ करने में शक्ति सम्पन्न तथा संधि विग्रह के रहस्य का ज्ञाता आदि गुणों की बात की गयी है।[3]

अर्थशास्त्र में 'अष्टादश तीर्थो' के कार्यो के वर्णन के प्रसंग में अधीनस्थ विभागों का उल्लेख मिलता है, परंतु अनेक उपविभागों के प्रधान विभागों का उल्लेख नहीं मिलता है। अध्यक्षों के कार्यो के आधार पर निम्न सूची निश्चित की जा सकती है– 'मंत्री' का कार्य समस्त विभागों के निरीक्षण का था अतएव उसके अतिरिक्त अन्य तीर्थ हैं– (1) पुरोहित (2) सेनापति, जिसके अधीन (क) गज (ख) अश्व (ग) रथ (घ) पैदल (ड.) जल सेना के अध्यक्ष, (च) निर्माण विभाग और (छ) चिकित्सा विभाग के कर्मचारी थे। (3) युवराज (4) दौवारिक (5) अन्तर्वेशिक (6) प्रशास्ता (7) समाहर्ता जिसके अधीनस्थ विभाग थे आय–व्यय और सामान्य प्रशासनिक विभाग जो इस प्रकार हैं– (क) देवताध्यक्ष (ख) अक्षपटलाध्यक्ष (ग) पण्याध्यक्ष (घ) कुप्याध्यक्ष (ड.) पौतवाध्यक्ष (च) मानाध्यक्ष (छ) शुल्काध्यक्ष (ज) सूत्राध्यक्ष (झ) सीताध्यक्ष (ञ) सूराध्यक्ष (ट) सूनाध्यक्ष (ठ) गणिकाध्यक्ष (ड) गौअध्यक्ष (द) मुद्राध्यक्ष (ण) विवताध्यक्ष (8) सन्निधाता के अधीनः– (क) कोषाध्यक्ष (ख) कोष्ठाकाराध्यक्ष (ग) आयुधानाराध्यक्ष (घ) बन्धनागाराध्यक्ष (ड.) सुवर्णाध्यक्ष आदि कर्मचारी थे। (9) प्रदेष्टा (10) नायक (11) पौर (12) व्यावहारिक (13) कार्मान्तिक के अधीन विभागाध्यक्ष थे– (क) आकाराध्यक्ष (ख) लोहाध्यक्ष (ग) लक्षणाध्यक्ष (घ) रूपदर्शक (ड.) लवणाध्यक्ष (14) मन्त्रीपरिषदाध्यक्ष (15) दण्डपाल (16) दुर्गपाल (17) अन्तपाल (18) आटविक[4]

अधिकारएवं कार्य

- **पुरोहितः–** उनकी राजव्यवस्था में 'पुरोहित' को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। वह उच्चकुलोत्पन्न, शीलगुणसम्पन्न, वेद वेदांग का ज्ञाता, ज्योतिषशास्त्र, दण्डनीति में पारंगत, अर्थववेद में निर्दिष्ट उपायों द्वारा दैवीय तथा मानुषी विपत्तियों का प्रतिकार करने वाला होना चाहिए तथा इन गुणों से संपन्न व्यक्ति को पुरोहित नियुक्त किया जाता था। प्रत्येक राज कार्य में पुरोहित शामिल रहता था। वह मन्त्रिपरिषद् का सदस्य था जिसे हर एक कार्य के पूर्व सलाह ली जाती थी। पुरोहित युद्ध क्षेत्र में सैनिकों को उत्साहित करता था।[5]

- **सेनापतिः–** अर्थशास्त्र में सेनापति को भी महत्वपूर्ण कर्मचारी बताया गया है। वह भी मन्त्रिपरिषद् का सदस्य होता था। प्रधानमंत्री तथा पुरोहित की भांति वह भी सर्वाधिक वेतन प्राप्त करता था। वह पैदलादि सेनाओं के कार्यो को भली–भांति समझने वाला, सभी प्रकार के युद्ध, अस्त्र–शस्त्र संचालन में निपुण, गज, अश्व, रथादि के संचालन और चतुरंगिणी सेना के कार्य एवं स्थान का ज्ञाता था। साथ ही उसमें अपनी भूमि, युद्धकाल, शत्रुसेना के दमन, दुर्ग के नाश करने और युद्ध के प्रस्थान के उचित समय को जानने की क्षमता होनी चाहिये।

- **युवराजः–** कौटिल्य राजतंत्रात्मक व्यवस्था के समर्थक थे। अतः उनके ग्रंथ में राजपद के उत्तराधिकारी युवराज की शिक्षा एवं योग्यता पर विशेष ध्यान दिया गया है। उनके अनुसार आत्मसम्पन्न गुण से युक्त राजकुमार को ही युवराज के पद पर नियुक्त किया जाना चाहिये। वह मंत्रिपरिषद् का सदस्य भी होता था। उसे सेनापति के रूप में भी नियुक्त किया जा सकता था। राजा की मृत्यु या बहुत दिनों तक व्याधिग्रस्त रहने पर प्रधानमंत्री युवराज को राजा के रूप में अभिषिक्त करके राज्य को समाप्त होने से बचाता था। शासन में भाग लेने से एक तो युवराज को शासन का अनुभव प्राप्त होता था और दूसरे उत्तराधिकार के आधार पर युद्ध की संभावना भी समाप्त हो जाती थी।[6]

- **दौवारिकः–** दौवारिक राज प्रसाद का प्रधान अधिकारी था और इस रूप में उसके कार्य निर्धरित थे जैसे– उसके आदेशानुसार राजप्रसाद के सभी दास–दासियां अपना–अपना कार्य करते थे और साथ ही किसी बाहरी व्यक्ति से सम्पर्क स्थापित करना निषिद्ध था। उसी की देख–रेख में राजभवन के अन्दर आने वाली वस्तुओं का विवरण लिखा जाता था तथा राजदरबार मे आने–जाने वाले सभी व्यक्तियों पर निगरानी रखने के कार्य भी उनकी देखरेख में होता था।

- **अन्तर्वेशिकः–** यह राज्य की अंगरक्षक सेना का प्रधान अधिकारी होता था। इसकी देखरेख में अन्तःपुर और बाहर राजा की रक्षा का प्रबंध होता है। वह राजभवन की रक्षा का पूरा प्रबंध करता था उसी की देखरेख में सशस्त्र सैनिकों का समूह था, जो राजा और अन्तःपुर की रक्षा करता था। राजा की सुरक्षा का सारा प्रबंध अन्तर्वेशिक का होता था जिसकी सहायता के लिये सशस्त्र सैनिक तैयार रहते थे।[7]

- **प्रशास्ताः–** प्रशास्ता के अधीन 'विष्टि' नामक कर्मचारी होते थे जिनका कार्य सैनिक शिविर बनाना, सैनिक मार्ग, नदी के पुल, बांध, कुंए, घाट आदि तैयार करना, घासादी उखाड़कर मैदान साफ करना, युद्ध भूमि में कवच, हथियार तथा घायल आदि सैनिकों को दूसरी जगह ले जाना आदि शामिल था।

- **समाहर्ताः–** शासन व्यवस्था में 'समाहर्ता' आय–व्यय तथा सामान्य प्रशासन विभाग का प्रधान अधिकारी होता था। राजकोष के लिये वह दुर्ग, राष्ट्र, खनि, सेतु, वन, ब्रज, व्यापार मार्ग नामक करों का संग्रह करता था। जनपद की शासन व्यवस्था के लिये समाहर्ता के अधीन 'गोप' तथा 'स्थानिक' नामक कर्मचारी होते थे। पांच से दस और दस–दस गांवो के केन्द्र का प्रबंध गोप और जनपद के चौथाई भाग का प्रबंध स्थानिक करता था। गोप को गांवों की जनगणना, पशुगणना, आय–व्यय, व्यापार, सेतु, जंगल आदि का पूरा विवरण निबंध पुस्तिका में लिखना होता था। इन सभी के निरीक्षण का कार्य स्थानिक करता था। इन सभी अधिकारियों के कार्यो की गुप्त सूचना प्राप्त करने के लिये समाहर्ता गुप्चतरों को नियुक्त करता था।[8]

- **प्रदेष्टाः–** 'प्रदेष्टा' कटंकशोधन नमक न्यायालय का प्रधान अधिकारी होता था। वह शिल्पियों, जुलाहों, धोबी, दर्जियों, सुनारों, वैध एवं अन्य पुरूषों द्वारा उत्पन्न पीड़ा से जनता की रक्षा करता था इन लोगों को दण्ड देने का अधिकार भी उसी को था। प्रदेष्टा के अधीन संस्थाध्यक्ष नामक कर्मचारी था जो व्यापारियों से प्रजा की रक्षा करता था। प्रदेष्टा जनपद में गोप तथा स्थानिक और दुर्ग में नागरिक द्वारा चोरों की सूचना प्राप्त करता था। वह समाहर्ता के साथ राजकर्मचारियों के कार्यो पर दृष्टि रखता था। न्याय कार्यो में 'प्रदेष्टा' द्वारा निष्पक्षता को सर्वोपरि स्थान दिया जाता था। वह पुरूष की स्थिति,

अपराध, कारण, परिस्थितियां, देशकाल को ध्यान में रखते हुए बिना किसी भेद–भाव के अपराधियों को दण्ड देता था। वही मार–पीट, खूनखराबा, कन्याओं के शीलभंग सम्बंधी विवादों की सुनवायी करता था।[9]

- **नायकः–** अर्थशास्त्र में नायक को भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। युद्धकाल में सेना का मुख्य संचालक वही होता था। सेनापति सेना–विभाग का प्रधान अधिकारी था किन्तु युद्धकाल या युद्ध क्षेत्र में सैन्य संचालन नायक के निर्देश में होता था। सेना के प्रमाण के समय वही सबसे आगे रहता था।
- **पौरः–** पौर शब्द से उनका तात्पर्य 'नागरिक' नामक अधिकारी से था, जिसे नगर–प्रशासन का अधिकार था। नागरिक के अधीन दस, बीस या चालीस कुलों पर एक गोप और नगर के चौथाई भाग के लिये 'स्थानिक' नामक अधिकारी होते थे। नागरिक का प्रधान कार्य नगर में शांति एवं सुव्यवस्था स्थापित करना था। नागरिक की देख–रेख में नगर की सफाई का पूरा प्रबंध होता था।[10]
- **व्यावहारिकः–** धर्मस्थलीय न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश को 'व्यावहारिक' कहा जाता था। उसे ही धर्मस्थ कहा जाता था। व्यावहारिक राज्य के व्यक्तियों से सम्बंधित निम्न प्रकार के विवादों का निर्णय करता था– शर्तनामा, वैवाहिक सम्बंध, मकान, खेत, मार्ग, उत्तराधिकार, ऋण सम्बंधी, धरोहर सम्बंधी, दास, श्रमिक तथा मजदूरी, चोरी के विवाद आदि।
- **कार्मान्तिकः–** कार्मान्तिक नामक कर्मचारी की देख–रेख में खदानों तथा कारखानों का प्रबंध होता था। खादानों तथा जंगलों से कच्चा माल मंगाकर कारखाने में वस्तुओं के निर्माण हेतु भेजने का प्रबंध भी वही करता था।
- **मन्त्रिपरिषदाध्यक्षः–** यह मन्त्रिपरिषद् का सचिव होता था। उन्होंने मन्त्रिपरिषद् को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। राज्य की महत्वपूर्ण नीतियों का निर्धारण भी मन्त्रिपरिषद् में ही होता था।
- **दण्डपालः–** इसमें पुलिस और सेना दोनों के कार्यो का समन्वय था। वह ऐसा अधिकारी था जो एक ओर तो सामान्य प्रशासनिक कार्य करता था और दूसरी ओर सेना की सहायता करता था।
- **दुर्गपालः–** उनके अनुसार दुर्गपाल को दुर्ग का प्रबंध करना होता था। दुर्गपाल को सीमांत स्थित दुर्गो को छोड़कर शेष दुर्गो का निर्माण, स्थापनाएवं रक्षा का प्रबंध करना होता था। दुर्ग के अन्तर्गत रखी जाने योग्य वस्तुओं का प्रबंध भी उसी के अधीन था।
- **अन्तपालः–** अर्थशास्त्र में सीमा की रक्षा के लिये 'अन्तपाल' नामक अधिकारी का उल्लेख किया गया है। उनके अनुसार राज्य की सीमा पर अन्तपाल नामक कर्मचारी के संरक्षण में एक दुर्ग स्थापित होना चाहिये। उसकी देख–रेख में द्वारभूत स्थानों का भी निर्माण होता था। वह विदेशी व्यापारियों की वस्तुओं की भली–भांति जांच कर मुद्रा लगाकर शुल्काध्यक्ष के पास भेजता था। वह अपना दुर्ग शत्रु को सुपुर्द कर उसे धोखे से समाप्त किये जाने में सहायता कराता था।
- **आटविकः–** उनके अनुसार जंगलो के समुचित प्रबंध का उत्तरदायित्व 'आटविक' नामक अधिकारी पर होता था। राज्य की रक्षा हेतु जंगलो में भी दुर्गो की स्थापना होती थी जिनका प्रबंध 'आटविक' को करना होता था।[11]

राजकर्मचारियों का वेतन एवं अन्य सुविधाएं

अर्थशास्त्र के अन्तर्गत प्रशासनिक मशीनरी से संलग्न सभी वरिष्ठ एवं अधीनस्थ पदाधिकारियों के भरण पोषण के लिये वेतन की समुचित व्यवस्था की गयी है। मौर्य प्रशासन में राज्य से प्राप्त होने वाले कुल राजस्व का 1/4 भाग प्रशासनिक मशीनरी को वेतन मुद्रा 'पण' में दिया जाता था जो 16 मासा तोल का होता था। एक पण में चांदी, तांबा और रांगा का अनुपात 11:4:1 होता था। मंत्री, पुरोहित, सेनापति और युवराज को 48,000 पण

वार्षिक वेतन प्राप्त होता था दौवारिक, अन्तर्वेशिक, प्रशास्ता, समाहर्ता, सन्निधाता को 24,000 पण तथा प्रदेष्टा, नायक, पौर, व्यावहारिक, कार्मान्तिक, सभ्य, दंडपाल, दुर्गपाल तथा अन्तपाल को 12,000 पण तथा प्रदेष्टा को 8000 पण, पैदल, अश्व, रथ, गज के अध्यक्षों और आटविकों को 4000 पण तथा अन्य सभी अध्यक्षों को 1000 पण वेतन दिया जाता था। इनके निर्धारित वेतन संबंधी प्रावधानों के अध्ययन से पता चलता है कि राज्य व्यवस्था के द्वारा प्रशासनिक मशीनरी को सजग, सक्रिय एवं भ्रष्टाचार युक्त, ईमानदार, सक्ष्यों–मुख बनाने के लिये ज्यादा से ज्यादा वार्षिक वेतन प्रदान किया जाता था। प्रशासनिक पदों के वेतन निर्धारण में उन्होंने काफी उदारता दिखायी है।वेतन के अतिरिक्त कर्मचारियों को अन्य सुविधायें भी प्राप्त थी जैसे कार्य करते हुए कर्मचारी की मृत्यु हो जाने पर उसका वेतन, उसके पुत्र एवं पत्नी को दिया जाता था। साथ ही उसके परिवार के वृद्ध रोगी पर राजा की कृपा रहती थी। यही नही उनके घर मृत्यु–व्याधि और बच्चा पैदा होने पर राजा की ओर से सहायता प्रदान की जाती थी।[12]

राजकीय उच्चाधिकारियों के चाल–चलन की परीक्षा

उनका मानना था कि राजकीय उच्चपदस्थ कर्मचारियों को आमत्य के गुणों से युक्त होना चाहिये। योग्यता एवं कार्य क्षमता के आधार पर ही उन्हें भिन्न पदों पर नियुक्त किया जाना चाहिये। उपयुक्त पदो पर नियुक्त किये जाने के पश्चात् समय–समय पर राजा उनके चाल–चलन की निगरानी कराता रहे, क्योंकि उनका मानना था कि मनुष्यों की चित्त–वृत्तियां सदा एक जैसी नहीं रहती। स्वभाव से शांत दिखायी देने वाला मनुष्य भी कार्य पर नियुक्त हो जाने के बाद उदण्ड हो सकता है। इसीलिये राजा को अध्यक्षों के संबंध में कारण देश, काल, कार्य, वेतन और लाभ आदि इन सभी बातों की जानकारी रखनी चाहिये। कर्मचारियों को चाहिये कि राजा की आज्ञा प्राप्त किये बिना किसी भी नए कार्य का आरंभ न करें। कार्यो की स्वतंत्रता के साथ–साथ वे कर्मचारियों पर दण्ड के माध्यम से नियंत्रण की भी व्यवस्था करते है जैसे– यदि उच्च पदस्थ कर्मचारी अपने कार्यो में प्रमाद करे तो उन पर उनके वेतन का दुगुना दण्ड लगाया जाये। उन्होंने भ्रष्टाचार के कई उदाहरण प्रस्तुत किये जैसे किसी अध्यक्ष की आमदनी थोड़ी और खर्च अधिक दिखाई दे, जो अधिकारी नियमित आय में सदैव कभी दिखाता है जो अधिकारी व्यय निर्मित निर्धारित राशि को खर्च न करके बचा लेता है वे सभी निश्चय ही राजधन का अपहरण करते है। उन सभी अपराधी अधिकारियों को कार्य हानि के मूल्य का यथोचित दण्ड दिये जाने का परामर्श दिया गया है। जो अधिकारी ईमानदार है तथा जो अध्यक्ष राजधन का अपहरण नहीं करते वरन् न्यायपरायण होकर राजा की समृद्धि और हित में प्रयत्नशील रहते है, ऐसे सच्चरित्र अध्यक्षों को सदा सम्मानपूर्वक उच्चपद पर बनाये रखने का विचार दिया गया है।[13]

राजकर्मचारियों का राजा के प्रति व्यवहार

उनके अनुसार जो व्यक्ति सांसरिक व्यवहारों में कुशल हो, वे राजा के प्रिय एवं हितैषी व्यक्तियों के द्वारा, सतकुलीन, बुद्धिमान एवं योग्य अमात्यों से सम्पन्न राजा का आश्रय प्राप्त करना चाहिये। यदि ऐसा राजा न मिले तो योग्य व्यक्तियों की तलाश करने वाले आत्म सम्पन्न राजा का आश्रय ग्रहण करना चाहिए भले ही आत्मसम्पन्न राजा के सुयोग्य अमात्य न हो तब भी वे उसे उसी का आश्रय लेने का परामर्श देते हैं परंतु यदि सुयोग्य अमात्य हो परंतु आत्म सम्पत्ति रहित राजा का आश्रय न लेने की बात करते हैं। क्योंकि उनका मानना है कि ऐसा राजा नीतिशास्त्र का ज्ञात नहीं होता है। वही कर्मचारियों का यह दायित्व है कि अति आवश्यक विषयों के संबध में यदि राजा द्वारा प्रश्न पूछे जाये तो वे उस समय या किसी भी समय अति निपुण लोगों की भांति निर्भीकतापूर्वक उत्तर दें। उनके अनुसार सरकारी कर्मचारियों के आचरण के संबंध में विशेष सतर्कता जरूरी है। उनका मानना था कि कोई व्यक्ति अपनी जीभ पर रखे हुए मधु या विष के स्वाद के प्रति उदासीन रहें ऐसा संभव नहीं है, जैसे– पानी में तैरने वाली मछली कब, कैसे और कितना पानी पी जाती है, यह पता लगाना बहुत मुश्किल है। प्रशासनिक अधिकारी अपनी शक्ति का प्रयोग करते समय कितना स्वार्थ साधन कर लेंगे यह मालूम करना अत्यंत कठिन है। अतः उन्होंने राजा को कर्मचारियों की गतिविधियों पर लगातार निगरानी रखने का परामर्श दिया।[14]

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि कौटिल्य काल में प्रशासनिक व्यवस्था एक सुसंगठित प्रशासन तंत्र द्वारा संचालित की जाती थी। उनकी प्रशासनिक व्यवस्था में सभी कर्मचारी अपने कार्यो के लिये राजा और उसके द्वारा निश्चित व्यक्तियों के समक्ष उत्तरदायी रहते थे क्योंकि उनकी नियुक्ति एवं पदक्षति का अधिकार राजा को ही प्राप्त होता था। वही आत्मसंपन्न राजा शास्त्रानुकूल अमुक व्यक्ति की नियुक्ति करता है। अधीनस्थ विभाग अपने प्रधान विभागाध्यक्ष और राजा दोनों के ही सामने अपने हर एक कार्य के लिए उत्तरदायी होते थे। उन्होंने अष्टादशतीर्थ एवं उनके अधीनस्थ विभागों की नियुक्ति, पदक्षति, उनके कार्य, उत्तरदायित्व का जो वर्णन प्रस्तुत किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। आज की प्रशासकीय शैक्षणिक कार्यप्रणाली में भी प्रत्येक विभाग में अध्यक्षों की पदावली मिलती है। कौटिल्यने उच्च लोकसेवकों अध्यक्षों और राजकर्मचारियों के विभागों के संगठन और उत्तरदायित्व की व्यवस्था कर राज्य व्यवस्था को सुदुढ़ बनाने में योगदान दिया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गैरोला वाचस्पति, 'कौटिलीय अर्थशास्त्रतम', चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, 2015, पृ. 39
2. कुमार डॉ. उमेश सिंह, संजय कुमार, 'प्राचीन एवं आधुनिक प्रशासनिक चितंक', नेशनल बुक आर्गेनाइजेशन, नई दिल्ली, 2002, पृ.5
3. पार्वती डॉ. टी. आर, 'कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राजनीतिक चेतना', शिवालिक प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृ. 129
4. वही, पृ. 128–129
5. प्रसाद डॉ. ओमप्रकाश, 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2014 पृ. 219
6. पार्वती डॉ. टी. आर, 'कौटिलीय के अर्थशास्त्र में राजनीतिक चेतना', शिवालिक प्रकाशन, दिल्ली, 2017. पृ. 131–135
7. वही, पृ. 137–139
8. गैरोला वाचस्पति, 'कौटिलीय अर्थशास्त्रम्य चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, 2015, पृ. 98–100
9. वही पृ. 100–101
10. कुमार डॉ. कृष्ण, 'प्राचीन भारत की प्रशासनिक एवं राजनीतिक संस्थाएं', श्री सरस्वती' सदन, नई दिल्ली, 1968, पृ. 44–46
11. गैरोला वाचस्पति, 'कौटिलीय अर्थशास्त्र', चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, 2015, पृ. 166
12. विद्यालंकार सत्यकेतु, 'प्राचीन भारत की शासन पद्धति और राजशास्त्र', श्री सरस्वती सदन मसूरी, 1975, पृ. 200–207
13. गैरोला वाचस्पति, 'कौटिलीय अर्थशास्त्रम्, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, 2015, पृ. 114–118
14. प्रसाद ओमप्रकाश, 'कौटिल्य अर्थशास्त्र', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2014, पृ. 240–241

❖◆❖